

१३. विशेष अध्ययन हेतु : कनुप्रिया

- डॉ. धर्मवीर भारती

लेखक परिचय : डॉ. धर्मवीर भारती जी का जन्म २५ दिसंबर १९२६ को उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद में हुआ। आपने इलाहाबाद में ही बी.ए. तथा एम.ए. (हिंदी साहित्य) किया। आपने आचार्य धीरेंद्र वर्मा के निर्देशन में 'सिद्ध साहित्य' पर शोध प्रबंध लिखा। यह शोध प्रबंध हिंदी साहित्य अनुसंधान के इतिहास में विशेष स्थान रखता है। आपने १९५९ तक अध्यापन कार्य किया। पत्रकारिता की ओर झुकाव होने के कारण भारती जी ने मुंबई से प्रकाशित होने वाले टाइम्स ऑफ इंडिया पब्लिकेशन के प्रकाशन 'धर्मयुग' का संपादन कार्य वर्षों तक किया। भारती जी की मृत्यु ४ सितंबर १९९७ को हुई।

प्रयोगवादी कवि होने के साथ-साथ आप उच्चकोटि के कथाकार तथा समीक्षक भी हैं। आपकी प्रयोगवादी तथा नयी कविताओं में लोक जीवन की रूमनियत की झाँकी मिलती है। आप एक ऐसे प्रगतिशील साहित्यकार कहे जा सकते हैं जो समाज और मूल्यों को यथार्थपरकता से देखते हैं। एक ऐसे दुर्लभ, असाधारण लेखकों में आपकी गिनती है जिन्होंने अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा से साहित्य की हर विधा को एक नया,

अप्रत्याशित मोड़ दिया है। आप अपने साहित्य में एक ताजा, मौलिक दृष्टि लेकर आए। आपने सामाजिक संदर्भों, असंगतियों, अव्यवस्थाओं को उस दृष्टि से आँका है जो उन असंगतियों और अव्यवस्थाओं को दूर करने की अपेक्षा रखती है। आपको 'पद्मश्री', 'व्यास सम्मान' एवं अन्य कई राष्ट्रीय पुरस्कारों से अलंकृत किया गया है।

प्रमुख कृतियाँ : 'गुनाहों का देवता', 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' (उपन्यास), 'सात गीत वर्ष', 'ठंडा लोहा', 'कनुप्रिया' (कविता संग्रह), 'मुर्दों का गाँव', 'चाँद और टूटे हुए लोग', 'आस्कर वाइल्ड की कहानियाँ', 'बंद गली का आखिरी मकान' (कहानी संग्रह), 'नदी प्यासी थी' (एकांकी), 'अंधा युग', 'सृष्टि का आखिरी आदमी' (काव्य नाटक), 'सिद्ध साहित्य' (साहित्यिक समीक्षा), 'एक समीक्षा', 'मानव मूल्य और साहित्य', 'कहानी-अकहानी', 'पश्यंती' (निबंध) आदि।

कृति परिचय : आधुनिक काल के रचनाकारों में डॉ. धर्मवीर भारती मूर्धन्य साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। 'कनुप्रिया' भारती जी की अनूठी और अद्भुत कृति है जो कनु (कन्हैया) की प्रिया अर्थात् राधा के मन में कृष्ण और महाभारत के पात्रों को लेकर चलने वाला काव्य है। 'कनुप्रिया' कृति हिंदी साहित्य और भारती जी के लिए 'मील का पत्थर' सिद्ध हुई है। कनुप्रिया पर समीक्षात्मक पुस्तकें लिखी गईं, परिचर्चाएँ भी हुईं परंतु 'कनुप्रिया' का काव्य प्रकार अब तक कोई भी समीक्षक निर्धारित नहीं कर पाया है कि यह महाकाव्य है या खंडकाव्य ! उसे गीतिकाव्य कहें अथवा गीतिनाट्य। परिणामतः 'कनुप्रिया' निश्चित रूप से किस काव्यवर्ग के अंतर्गत आती है; यह कहना कठिन हो जाता है।

कुछ आलोचकों के अनुसार 'कनुप्रिया' महाकाव्य नहीं है। वैसे तो 'कनुप्रिया' में महाकाव्य के अनेक लक्षण विद्यमान हैं किंतु उनका स्वरूप परिवर्तित है। इसमें नायक प्रधान न होकर; नायिका प्रधान है। काव्य में सर्गबद्धता है परंतु 'कनुप्रिया' आधुनिक मूल्यों की नई कविता होने के कारण इसमें छंद निर्वाह का प्रश्न अप्रासंगिक है। प्रकृति चित्रण अवश्य है परंतु वह स्वतंत्र विषय नहीं; उपादान बनकर उपस्थित है। संक्षेप में कहना हो तो कनुप्रिया में महाकाव्य के संपूर्ण लक्षण अपने शास्त्रीय रूप में प्राप्त नहीं हैं।

कुछ आलोचकों के अनुसार 'कनुप्रिया' में भारती जी ने सर्ग के रूप में गीत दिए हैं परंतु इन गीतों को यदि अलग-अलग रूप में देखें तो ये अपने-आप में पूर्ण लगते हैं। प्रकृति चित्रण भी उपादान के रूप में आता है। इसमें जीवन के किसी एक पक्ष का उद्घाटन नहीं होता है अपितु राधा के मानसिक संघर्ष के प्रसंग व्यक्त हुए हैं। अतः 'कनुप्रिया' को खंडकाव्य की कोटि में भी नहीं रखा जा सकता।

कुछ आलोचकों के अनुसार 'कनुप्रिया' में प्रगीत काव्य के अनेक गुण अवश्य प्राप्त होते हैं। प्रगीत का आवश्यक तत्त्व वैयक्तिक अनुभूति भी इसमें व्यक्त हुई है अर्थात् राधा के भावाकुल उद्गार। आदि से अंत तक राधा अपने ही परिप्रेक्ष्य में कनु के कार्य व्यापार को देखती है लेकिन 'कनुप्रिया' के गीतों में गेयात्मकता नहीं है जिसे महादेवी वर्मा प्रगीत काव्य के अत्यावश्यक लक्षण के रूप में स्वीकार करती हैं। कनुप्रिया के गीत एक शृंखला के गीतों के रूप में ही अर्थ गांभीर्य उपस्थित करते हैं। अतः 'कनुप्रिया' को शुद्ध रूप से 'प्रगीत काव्य' की संज्ञा नहीं दी जा सकती।

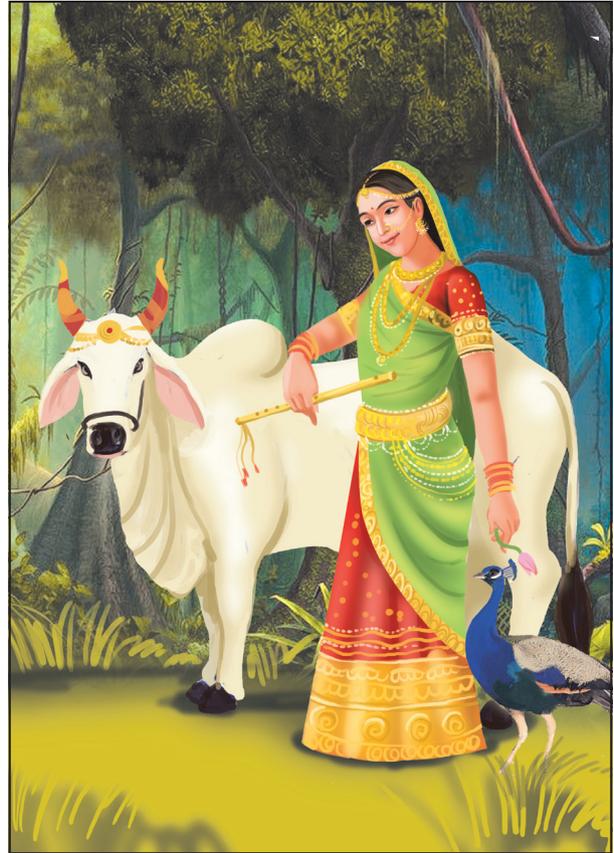
कनुप्रिया के रचयिता डॉ. धर्मवीर भारती ने स्वयं 'कनुप्रिया' को किस काव्य कोटि में रखना चाहिए; इसपर अपना मत व्यक्त नहीं किया है। वे काव्य की साहित्यिक शिल्प की कोई विवेचना भी नहीं करते हैं। अतः उनकी ओर से कनुप्रिया के काव्य प्रकार का कोई संकेत नहीं मिलता है। कनुप्रिया में भावों की एक धारा बहती है जो एक कड़ी के रूप में है।

डॉ. धर्मवीर भारती की महाभारत युद्ध की पृष्ठभूमि में लिखी 'कनुप्रिया' कृति हिंदी साहित्य जगत में अत्यंत चर्चित रही है। 'कनुप्रिया' का प्राणस्वर बहुत ही भिन्न है। 'कनुप्रिया' आधुनिक मूल्यों का काव्य है। उसकी मूल संवेदना आधुनिक धरातल पर उत्पन्न हुई है। इसका आधार मिथक है। यह मिथक राधा और कृष्ण के प्रेम और महाभारत की कथा से संबद्ध है।

'कनुप्रिया' अर्थात् कन्हैया की प्रिय सखी 'राधा'।

राधा को लगता है कि प्रेम त्यागकर युद्ध का अवलंब करना निरर्थक बात है। यहाँ कनु उपस्थित नहीं है। उन्हें जानने का माध्यम है राधा। धर्मवीर भारती का मानना है कि हम बाह्य जगत को जीते रहते हैं, सहते और अनुभव करते रहते हैं। चाहे वह युद्ध बाह्य जगत का हो... चाहे बलिदान का परंतु कुछ क्षण ऐसे भी होते हैं, जब हमें अनुभूत होता है कि महत्त्व बाह्य घटनाओं के उद्देग का नहीं है; महत्त्व है उस चरम तन्मयता के क्षण का... जिसे हम अपने भीतर साक्षात्कार करते हैं। यह क्षण बाह्य इतिहास से अधिक मूल्यवान सिद्ध होता है। इस प्रकार बाह्य स्थितियों की अनुभूति और चरम तन्मयता के क्षण को एक ही स्तर पर देखना किसी महापुरुष की सामर्थ्य की बात होती है।

लेकिन कोई मनुष्य ऐसा भी होता है जिसने बड़े सहज मन से जीवन जीया है... चरम तन्मयता के क्षणों में डूबकर जीवन की सार्थकता पाई है। अतः उसका यह आग्रह होता है कि वह उसी सहज मन की कसौटी पर सभी घटनाओं, व्यक्तियों को परखेगा... जाँचेगा।



ऐसा ही आग्रह कनुप्रिया अर्थात् राधा का है अपने सखा कृष्ण से... तन्मयता के क्षणों को जीना और उन्हीं क्षणों में अपने सखा कृष्ण की सभी लीलाओं की अनुभूति करना कनुप्रिया के भावात्मक विकास के चरण हैं। इसीलिए व्याख्याकार कृष्ण के इतिहास निर्माण को कनुप्रिया इसी चरम तन्मयता के क्षणों की दृष्टि से देखती है।

कनुप्रिया भी महाभारत युद्ध की उसी समस्या तक पहुँचती है; जहाँ दूसरे पात्र भी हैं परंतु कनुप्रिया उस समस्या

तक अपने भावस्तर अथवा तन्मयता के क्षणों द्वारा पहुँचती है। यह सब उसके अनजाने में होता है क्योंकि कनुप्रिया की मूलप्रवृत्ति संशय अथवा जिज्ञासा नहीं है अपितु भावोत्कट तन्मयता है।

राधा कृष्ण से महाभारत युद्ध को लेकर कई प्रश्न पूछती है। महाभारत युद्ध में हुई जय-पराजय, कृष्ण की भूमिका... युद्ध का उद्देश्य... युद्ध की भयानकता, प्रचंड संहार आदि बातों से संबंधित राधा का कृष्ण से हुआ संवाद यहाँ उद्धृत है।

सेतु : मैं

राधा कहती है, हे कान्हा... इतिहास की बदली हुई इस करवट ने तुम्हें युद्ध का महानायक बना दिया लेकिन हे कनु ! इसके लिए बलि किसकी चढ़ी ? तुम महानायक के शिखर पर अंततः मेरे ही सिर पर पैर रखकर आगे बढ़ गए।

तो क्या कनु ! इस लीला क्षेत्र से उठकर युद्धक्षेत्र तक पहुँचकर ईश्वरीय स्वरूप धारण करने के बीच जो अलंघ्य दूरी थी; क्या उसके लिए तुमने मुझे ही सेतु बनाया ? क्या मेरे प्रेम को तुमने साध्य न मानकर साधन माना !

अब इन शिखरों, मृत्यु घाटियों के बीच बना यह पुल निरर्थक लगता है... कनु के बिना मेरा यह शरीर रूपी पुल निर्जीव... कंपकंपाता-सा रह गया है। अंततः जिसको जाना था... वह तो मुझसे दूर चला गया है।

अमंगल छाया

इस सर्ग में राधा के दो रूप दिखाई देते हैं। राधा के अवचेतन मन में बैठी राधा और कृष्ण तथा चेतनावस्था में स्थित राधा और कृष्ण। यहाँ अवचेतन मन में बैठी राधा चेतनावस्था में स्थित राधा को संबोधित करती है। हे राधा ! घाट से ऊपर आते समय कदंब के नीचे खड़े कनु को देवता समझ प्रणाम करने के लिए तू जिस रास्ते आती थी... हे बावरी ! अब तू उस राह से मत आ।

क्या ये उजड़े कुंज, रौंदी गई लताएँ, आकाश में उठे हुए धूल के बगूले तुम्हें नहीं बता रहे हैं कि जिस राह से तू आती थी... उस रास्ते से महाभारत के युद्ध में भाग लेने के लिए श्रीकृष्ण की अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ जाने वाली हैं।

आज तू पथ से दूर हट जा... उस लताकुंज की ओट में जिस कनु के कारण तेरा प्रेम व्यथित और दुखी हुआ है; उसे छुपा ले... क्योंकि युद्ध के लिए इसी पथ से द्वारिका की उन्मत्त सेनाएँ जा रही हैं।

हे राधा। मैं मानती हूँ कि कनु सब से अधिक तुम्हारा है... तुम उसके संपूर्ण व्यक्तित्व से परिचित हो... ये सारे सैनिक कनु के हैं... लेकिन ये तुम्हें नहीं जानते। यहाँ तक कि कनु भी इस समय तुमसे अनभिज्ञ हो गए हैं। यहीं पर... तुम्हारे न आने पर सारी शाम आम की डाल का सहारा लिये कनु वंशी बजा-बजाकर तुम्हें पुकारा करते थे।

आज वह आम की डाल काट दी जाएगी... कारण यह है कि कृष्ण के सेनापतियों के तेज गतिवाले रथों की ऊँची पताकाओं में यह डाल उलझती है... अटकती है। यही नहीं; पथ के किनारे खड़ा यह पवित्र अशोक पेड़ खंड-खंड नहीं किया गया तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए... क्योंकि अब यह युद्ध इतना प्रलयकारी बन चुका है कि सेना के स्वागत में यदि ग्रामवासी तोरण नहीं सजाएँगे तो कदाचित् यह ग्राम भी उजाड़ दिया जाएगा।

हे कनुप्रिया... कनु के साथ तुमने व्यतीत किए हुए तन्मयता के गहरे क्षणों को कनु भूल चुके हैं; इस समय कृष्ण को केवल अपना वर्तमान काल अर्थात् महाभारत का निर्णायक युद्ध ही याद है।

हे कनुप्रिया... आज यदि कृष्ण युद्ध की इस हड़बड़ाहट में तुम और तुम्हारे प्यार से अपरिचित होकर तुमसे दूर चले गए हैं तो तुम्हें उदास नहीं होना चाहिए।

हे राधे... तुम्हें तो गर्व होना चाहिए क्योंकि किसके महान प्रेमी के पास अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ हैं। वह केवल तुम हो...

एक प्रश्न

राधा कृष्ण को संबोधित करती है- मेरे महान कनु... अच्छा मान भी लो... एक क्षण के लिए मैं यह स्वीकार कर लूँ कि तुम्हें लेकर जो कुछ मैंने सोचा... जीया... वे सब मेरी तन्मयता के गहरे क्षण थे... तुम मेरे इन क्षणों को भावावेश कहोगे... मेरी कोमल कल्पनाएँ कहोगे... तुम्हारी दृष्टि से मेरी तन्मयता के गहरे क्षणों को व्यक्त करने वाले वे शब्द निरर्थक परंतु आकर्षक शब्द हैं। मान लो... एक क्षण के लिए मैं यह स्वीकार कर लूँ कि महाभारत का यह युद्ध पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म, न्याय-दंड, क्षमा-शील के बीच का युद्ध था। इसलिए इस युद्ध का होना इस युग का जीवित सत्य था... जिसके नायक तुम थे।

फिर भी कनु... मैं तुम्हारे इस नायकत्व से परिचित नहीं हूँ। मैं तो वही तुम्हारी बावरी सखी हूँ... मित्र हूँ। तुमने

मुझे जितना ज्ञान... उपदेश दिया... मैंने उतना ही ज्ञान पाया है। मैंने सदैव तुमसे स्नेहासिक्त ज्ञान ही पाया।

प्रेम और साख्यभाव को तुमने जितना मुझे दिया; वह पूरा-का-पूरा समेटकर, सँजोकर भी मैं तुम्हारे उन उदात्त और महान कार्यों को समझ नहीं पाई हूँ... उनके प्रयोजन का बोध मैं कभी कर नहीं पाई हूँ क्योंकि मैंने तुम्हें सदैव तन्मयता के गहरे क्षणों में जीया है।

जिस यमुना नदी में मैं स्वयं को निहारा करती थी... और तुममें खो जाती थी... अब उस नदी में शस्त्रों से लदी असंख्य नौकाएँ न जाने कहाँ जाती हैं... उसी नदी की धारा में बहकर आने वाले टूटे रथ और फटी पताकाएँ किसकी हैं। हे कनु... महाभारत का वह युद्ध जिसका कर्णधार तुम स्वयं को समझते हो... वह कुरुक्षेत्र... जहाँ एक पक्ष की सेनाएँ हारीं... दूसरे पक्ष की सेनाएँ जीतीं... जहाँ गगनभेदी युद्ध घोष होता रहा... जहाँ क्रंदन स्वर गूँजता रहा... जहाँ अमानवीय और क्रूर घटनाएँ घटित हुईं... और उन घटनाओं से पलायन किए हुए सैनिक बताते रहे... क्या यह सब सार्थक है कनु? ये गिद्ध जो चारों दिशाओं से उड़-उड़कर उत्तर दिशा की ओर जाते हैं; क्या उनको तुम बुलाते हो? जैसे भटकी हुई गायों को बुलाते थे।

हे कनु! मैं जो कुछ समझ पा रही हूँ... उतनी ही समझ मैंने तुमसे पाई है... उस समझ को बटोरकर भी मैं यह जान गई हूँ कि और भी बहुत कुछ है तुम्हारे पास... जिसका कोई भी अर्थ मैं समझ नहीं पाई हूँ। मेरी तन्मयता के गहरे क्षणों में मैंने उनको अनुभूत ही नहीं किया है। हे कनु! जिस तरह तुमने कुरुक्षेत्र के युद्ध मैदान पर अर्जुन को युद्ध का प्रयोजन समझाया, युद्ध की सार्थकता का पाठ पढ़ाया, वैसे मुझे भी युद्ध की सार्थकता समझाओ। यदि मेरी तन्मयता के गहरे क्षण तुम्हारी दृष्टि से अर्थहीन परंतु आकर्षक थे... तो तुम्हारी दृष्टि से सार्थक क्या है?

शब्द : अर्थहीन

राधा का चेतन मन अवचेतन मन को संबोधित कर रहा है। कनु, युद्ध की सार्थकता को तुम मुझे कैसे समझाओगे... सार्थकता को बताने वाले शब्द मेरे लिए अर्थहीन हैं। मेरे पास बैठकर मेरे रूखे बालों में उँगलियाँ उलझाए तुम्हारे काँपते होंठों से प्रणय के शब्द निकले थे; तुम्हें कई स्थानों पर मैंने कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व जैसे शब्दों को बोलते सुना है... मैं नहीं जानती कि अर्जुन ने इन

शब्दों में क्या पाया है लेकिन मैं इन शब्दों को सुनकर भी अर्जुन की तरह कुछ पाती नहीं हूँ... मैं राह में रुककर तुम्हारे उन अधरों की कल्पना करती हूँ... जिन अधरों से तुमने प्रणय के वे शब्द पहली बार कहे थे जो मेरी तन्मयता के गहरे क्षणों की साक्ष्य बन गए थे।

मैं कल्पना करती हूँ कि अर्जुन के स्थान पर मैं हूँ और मेरे मन में यह मोह उत्पन्न हो गया है। जैसे तुमने अर्जुन को युद्ध की सार्थकता समझाई है; वैसे मैं भी तुमसे समझूँ। यद्यपि मैं नहीं जानती कि यह युद्ध कौन-सा है? किसके बीच हो रहा है? मुझे किसके पक्ष में होना चाहिए? लेकिन मेरे मन में यह मोह उत्पन्न हुआ है क्योंकि तुम्हारा समझाया जाना... समझाते हुए बोलना मुझे बहुत अच्छा लगता है। जब तुम मुझे समझाते हो तो लगता है जैसे... युद्ध रुक गया है, सेनाएँ स्तब्ध खड़ी रह गई हैं और इतिहास की गति रुक गई है... और तुम मुझे समझा रहे हो।

लेकिन कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व जैसे जिन शब्दों को तुम कहते हो... वे मेरे लिए नितांत अर्थहीन हैं क्योंकि ये शब्द मेरी तन्मयता के गहरे क्षणों के शब्द नहीं हैं। इन शब्दों के परे मैं तुम्हें अपनी तन्मयता के गहरे क्षणों में देखती हूँ कि तुम प्रणय की बातें कर रहे हो; प्रणय के एक-एक शब्द को तुम समझकर मैं पी रही हूँ। तुम्हारा संपूर्ण व्यक्तित्व मेरे ऊपर जैसे छा जाता है। आभास होता है जैसे तुम्हारे जादू भरे होंठों से ये शब्द रजनीगंधा के फूलों की तरह झर रहे हैं। एक के बाद एक।

कनु, जिन शब्दों का तुम उच्चारण करते हो... कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व... ये शब्द मुझ तक आते-आते बदल जाते हैं... मुझे तो ये शब्द इस तरह सुनाई देते हैं... राधन्... राधन्... राधन्। तुम्हारे द्वारा कहे जाने वाले शब्द... असंख्य हैं... संख्यातीत हैं... लेकिन उनका एक ही अर्थ है... मैं... मैं... केवल मैं!

अब बताओ तो कनु। इन शब्दों से तुम मुझे इतिहास कैसे समझाओगे? मेरी तन्मयता के गहरे क्षणों में जीये गए वे शब्द ही मुझे सार्थक लगते हैं।

— o —

सेतु : मैं

नीचे की घाटी से
ऊपर के शिखरों पर
जिसको जाना था वह चला गया-
हाय मुझी पर पग रख
मेरी बाँहों से
इतिहास तुम्हें ले गया !

सुनो कनु, सुनो
क्या मैं सिर्फ एक सेतु थी तुम्हारे लिए
लीलाभूमि और युद्धक्षेत्र के
अलंघ्य अंतराल में !

अब इन सूने शिखरों, मृत्यु घाटियों में बने
सोने के पतले गुँथे तारोंवाले पुल-सा
निर्जन
निरर्थक
काँपता-सा, यहाँ छूट गया-मेरा यह सेतु जिस्म
-जिसको जाना था वह चला गया

अमंगल छाया

घाट से आते हुए
कदंब के नीचे खड़े कनु को
ध्यानमग्न देवता समझ, प्रणाम करने
जिस राह से तू लौटती थी बावरी
आज उस राह से न लौट
उजड़े हुए कुंज
रौंदी हुई लताएँ
आकाश पर छाई हुई धूल
क्या तुझे यह नहीं बता रही
कि आज उस राह से
कृष्ण की अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ
युद्ध में भाग लेने जा रही हैं !

आज उस पथ से अलग हटकर खड़ी हो
बावरी !
लताकुंज की ओट
छिपा ले अपने आहत प्यार को
आज इस गाँव से

द्वारिका की युद्धोन्मत्त सेनाएँ गुजर रही हैं
मान लिया कि कनु तेरा
सर्वाधिक अपना है
मान लिया कि तू
उसके रोम-रोम से परिचित है
मान लिया कि ये अगणित सैनिक
एक-एक उसके हैं :
पर जान रख कि ये तुझे बिलकुल नहीं जानते
पथ से हट जा बावरी

यह आम्रवृक्ष की डाल
उनकी विशेष प्रिय थी
तेरे न आने पर
सारी शाम इसपर टिक
उन्होंने वंशी में बार-बार
तेरा नाम भरकर तुझे टेरा था-

आज यह आम की डाल
सदा-सदा के लिए काट दी जाएगी
क्योंकि कृष्ण के सेनापतियों के
वायुवेगामी रथों की
गगनचुंबी ध्वजाओं में
यह नीची डाल अटकती है
और यह पथ के किनारे खड़ा
छायादार पावन अशोक वृक्ष
आज खंड-खंड हो जाएगा तो क्या-
यदि ग्रामवासी, सेनाओं के स्वागत में
तोरण नहीं सजाते
तो क्या सारा ग्राम नहीं उजाड़ दिया जाएगा ?

दुख क्यों करती है पगली
क्या हुआ जो
कनु के ये वर्तमान अपने,
तेरे उन तन्मय क्षणों की कथा से
अनभिज्ञ हैं
उदास क्यों होती है नासमझ
कि इस भीड़-भाड़ में
तू और तेरा प्यार नितांत अपरिचित
छूट गए हैं,

गर्व कर बावरी !
कौन है जिसके महान प्रिय की
अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ हों ?

एक प्रश्न

अच्छा, मेरे महान कनु,
मान लो कि क्षण भर को
मैं यह स्वीकार लूँ
कि मेरे ये सारे तन्मयता के गहरे क्षण
सिर्फ भावावेश थे,
सुकोमल कल्पनाएँ थीं
रँगे हुए, अर्थहीन, आकर्षक शब्द थे—
मान लो कि
क्षण भर को
मैं यह स्वीकार लूँ
कि
पाप-पुण्य, धर्माधर्म, न्याय-दंड
क्षमा-शीलवाला यह तुम्हारा युद्ध सत्य है—

तो भी मैं क्या करूँ कनु,
मैं तो वही हूँ
तुम्हारी बावरी मित्र
जिसे सदा उतना ही ज्ञान मिला
जितना तुमने उसे दिया
जितना तुमने मुझे दिया है अभी तक
उसे पूरा समेटकर भी
आस-पास जाने कितना है तुम्हारे इतिहास का
जिसका कुछ अर्थ मुझे समझ नहीं आता है !

अपनी जमुना में
जहाँ घंटों अपने को निहारा करती थी मैं
वहाँ अब शस्त्रों से लदी हुई
अगणित नौकाओं की पंक्ति रोज-रोज कहाँ जाती है ?
धारा में बह-बहकर आते हुए टूटे रथ
जर्जर पताकाएँ किसकी हैं ?

हारी हुई सेनाएँ, जीती हुई सेनाएँ
नभ को कँपाते हुए युद्ध घोष, क्रंदन-स्वर,
भागते हुए सैनिकों से सुनी हुई

अकल्पनीय अमानुषिक घटनाएँ युद्ध की
क्या ये सब सार्थक हैं?
चारों दिशाओं से
उत्तर को उड़-उड़कर जाते हुए
गृद्धों को क्या तुम बुलाते हो

(जैसे बुलाते थे भटकी हुई गायों को)

जितनी समझ तुमसे अब तक पाई है कनु,
उतनी बटोरकर भी
कितना कुछ है जिसका
कोई भी अर्थ मुझे समझ नहीं आता है

अर्जुन की तरह कभी
मुझे भी समझा दो
सार्थकता है क्या बंधु?
मान लो कि मेरी तन्मयता के गहरे क्षण
रंगे हुए, अर्थहीन, आकर्षक शब्द थे-
तो सार्थक फिर क्या है कनु?
पर इस सार्थकता को तुम मुझे
कैसे समझाओगे कनु?

शब्द : अर्थहीन

शब्द, शब्द, शब्द,

मेरे लिए सब अर्थहीन हैं
यदि वे मेरे पास बैठकर
तुम्हारे काँपते अधरों से नहीं निकलते
शब्द, शब्द, शब्द,

कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व.....

मैंने भी गली-गली सुने हैं ये शब्द
अर्जुन ने इनमें चाहे कुछ भी पाया हो
मैं इन्हें सुनकर कुछ भी नहीं पाती प्रिय,
सिर्फ राह में ठिठककर
तुम्हारे उन अधरों की कल्पना करती हूँ
जिनसे तुमने ये शब्द पहली बार कहे होंगे

मैं कल्पना करती हूँ कि
अर्जुन की जगह मैं हूँ
और मेरे मन में मोह उत्पन्न हो गया है
और मैं नहीं जानती कि युद्ध कौन-सा है
और मैं किसके पक्ष में हूँ

और समस्या क्या है
और लड़ाई किस बात की है
लेकिन मेरे मन में मोह उत्पन्न हो गया है
क्योंकि तुम्हारे द्वारा समझाया जाना
मुझे बहुत अच्छा लगता है
और सेनाएँ स्तब्ध खड़ी हैं
और इतिहास स्थगित हो गया है
और तुम मुझे समझा रहे हो.....

कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व,
शब्द, शब्द, शब्द

मेरे लिए नितांत अर्थहीन हैं—
मैं इन सबके परे अपलक तुम्हें देख रही हूँ
हर शब्द को अँजुरी बनाकर
बूँद-बूँद तुम्हें पी रही हूँ
और तुम्हारा तेज
मेरे जिस्म के एक-एक मूर्च्छित संवेदन को
धधका रहा है

और तुम्हारे जादू भरे होंठों से
रजनीगंधा के फूलों की तरह टप-टप शब्द झर रहे हैं
एक के बाद एक के बाद एक.....

कर्म, स्वधर्म, निर्णय, दायित्व.....
मुझ तक आते-आते सब बदल गए हैं
मुझे सुन पड़ता है केवल
राधन, राधन, राधन,

शब्द, शब्द, शब्द,
तुम्हारे शब्द अगणित हैं कनु-संख्यातीत
पर उनका अर्थ मात्र एक है—
मैं
मैं
केवल मैं !

फिर उन शब्दों से
मुझी को
इतिहास कैसे समझाओगे कनु ?

— ('कनुप्रिया' से)

— 0 —

आकलन

१. (अ) कृति पूर्ण कीजिए :-

- (१) कनुप्रिया की तन्मयता के गहरे क्षण सिर्फ -
- (२) कनुप्रिया के अनुसार यही युद्ध का सत्य स्वरूप है -
- (३) कनुप्रिया के लिए वे अर्थहीन शब्द जो गली-गली सुनाई देते हैं -

(आ) कारण लिखिए :-

- (१) कनुप्रिया के मन में मोह उत्पन्न हो गया है ।
- (२) आम की डाल सदा-सदा के लिए काट दी जाएगी ।

अभिव्यक्ति

३. (अ) 'व्यक्ति को कर्मप्रधान होना चाहिए', इस विषय पर अपना मत लिखिए ।
- (आ) 'वृक्ष की उपयोगिता', इस विषय पर अपने विचार लिखिए ।

पाठ पर आधारित लघूत्तरी प्रश्न

३. (अ) 'कवि ने राधा के माध्यम से आधुनिक मानव की व्यथा को शब्दबद्ध किया है', इस कथन को स्पष्ट कीजिए ।
- (आ) राधा की दृष्टि से जीवन की सार्थकता बताइए ।

रसास्वादन

४. 'कनुप्रिया' काव्य का रसास्वादन कीजिए ।